पठन स्तर ४

मुमताज़ ने काढ़े अपने सपने

Author: Jolly Rohatgi
Illustrator: Ram Soni
Translator: Bhavna Pankaj

मीठी ईद क्या आई कि लखनऊ में एक मेला-सा लग गया था।

बाज़ार में यहाँ से वहाँ, वहाँ से यहाँ आते-जाते लोग नए-नए जोड़े पहने इतराते घूमते थे। दुकानों में मिठाइयों के ढेर मुँह में पानी भरते-इमरती, लड्डू, दिलबहार और चमचम, ज़ायकेदार गुनगुने बड़े कबाब, गर्मागर्म छुनछुन करती आलू की टिक्कियाँ...हर तरह का खाने का सामान, कपड़ा-लत्ता, चमचम करते चाँदी के ज़ेवरात-बाज़ार के चौक की दुकानें दुल्हन जैसी सजी थीं।

तोहफ़ों से लदीं, मेहरुनिस्सा और कमरुनिस्सा अपने भाई अज़हर मियाँ के साथ हाथों में मीठी-निमकी की पत्तलें लिए चली जा रही थीं। ईद के मौके पर तीनों को बहुत उम्दा चिकनकारी किए नए कपड़े मिले थे जिन्हें पहन कर उनका मन बल्लियों उछल रहा था। मेहरु के कुरते पर गहरे गुलाबी रंग के फूल कढ़े थे और कमरु भी फूल-पत्तीदार कढ़ाई वाला कुरता पहने थी। अज़हर मियाँ भी अपनी बारीक कढ़ी नई टोपी पहने काफ़ी खुश दिखाई देते थे।

उनके अब्बू ठेकेदारी करते थे। चौक के थोक का सामान रखने वाले दुकानदार उन्हें कपड़ा देते थे और अब्बू घर पर ही कढ़ाई का काम करने वाली औरतों से उस कपड़े पर चिकनकारी करवाते थे। दुकानदार हर औरत को कढ़ाई के हर कपड़े का पैसा देता था। अब्बू भी कपड़े के हिसाब से आढ़त पाते थे।

अब्बू अच्छा-ख़ासा कमा लेते थे। इसलिए अम्मी को कढ़ाई का काम नहीं करना पड़ता था। कमरु और मेहरु पढ़ने के लिए मस्ज़िद के मदरसे जाती थीं जबकि अज़हर लड़कों के स्कूल जाते थे। कमरु और मेहरु थोड़ी-बहुत कढ़ाई कर लेती थीं लेकिन उनके काम की तारीफ़ कुछ ज़्यादा ही होती थी। उनके अब्बू ठेकेदार जो थे। आसपास रहने वाली सभी औरतों को काम मिलता रहे, उनके चार पैसे बन जाएँ-यह सब अब्बू ही तो करते थे।

एकाएक अज़हर मियाँ रुक गए, “घर पर बैठी हमारी एक और बहन भी तो है जिसने आज नए कपड़े नहीं पहने हैं। हम में से किसी ने भी उसके बारे में सोचा तक नहीं।”

“मुमताज़ हमारी मौसेरी बहन ही तो है। और वह घर पर इसलिए है क्योंकि वह चल नहीं सकती,” कमरु और मेहरु इकट्ठा चिहुंकीं, “लेकिन हाँ, हमें उसके लिए भी कुछ मिठाई-पकवान तो ले ही लेना चाहिए।”

बच्चे गोमती के किनारे वाले मेले पहुँच चुके थे। क्या मज़े-मज़े की चीज़े थीं वहाँ! रंगबिरंगी काँच की चूड़ियाँ, रिबन, हार, मिट्टी के बने पशु-पक्षी, सिपाही और गुड़िया- सब के लिए कुछ न कुछ! मेले की चकाचौंध में बच्चे अपनी बहन के बारे में सब भूल-भुला गए।

मुमताज़ आबिदा ख़ाला, जो कि बच्चों की मौसी थीं, के घर अकेली ही बैठी थी। पास ही कोने में उसकी बैसाखियाँ रखी थीं। उसके हाथ तो
कढ़ाई कर रहे थे लेकिन उसका मन दूर अपने घर हरदोई में था जहाँ उसकी अम्मी और दो बहनें रहती थीं। क्या उनको भी उसकी उतनी ही याद आती थी जितनी उनकी उसे?

मुमताज़ के अब्बू के गुज़र जाने के बाद घर में पैसे की किल्लत रहने लगी थी। एक दिन आबिदा ख़ाला उसकी अम्मी से कहने लगीं कि मुहल्ले की औरतों को इकट्ठा करके कढ़ाई का काम शुरू करें।

तब से मुहल्ले की औरतें हर रोज़ एक समय किसी किसी के यहाँ बरामदे में चारपाई-चटाई पर बैठने लगीं और रेडियो पर गाने सुनते-सुनते कपड़े काढ़ने लगीं। मुमताज़ की ज़िम्मेदारी औरतों को चाय पिलाने की थी जबकि बड़ी-बूढ़ियाँ अपने-अपने पानदान से गिलौरियाँ निकाल कर चबाती रहतीं।

चाय के दौर चलते तो साथ ही चटपटी इधर-उधर की खूब गपशप भी होती लेकिन काम बराबर चलता रहता। शाम होती तो सब औरतें अपना काम समेटतीं और घर को रवाना होतीं। उन्हें अपने-अपने परिवार का खाना भी तो तैयार करना होता था।

कढ़े हुए कपड़े आबिदा ख़ाला कमरु और मेहरु के अब्बू को भेज देतीं और वे मेहनताने के साथ-साथ और कपड़ा भेजते।

कुछ ही रोज़ पहले मुमताज़ आबिदा ख़ाला के साथ लखनऊ आई थी जिससे कशीदाकारी के कुछ नए टाँके सीख सके और घर लौट कर बाकी औरतों को सिखा
सके।

मुमताज़ अपने घर से दूर तो थी लेकिन परिवार का एक प्यारा-सा हिस्सा उसके पास भी तो था! उसकी प्यारी तोती मुनिया और दो कबूतर-लक्का और लोटन! ये तीनों उसका दिल बहलाते थे।

तीनों पंछी बहुत ही प्रतिभाशाली थे। लक्का कितनी ऊँची उड़ान भर लेता था। और लोटन मियाँ डाल-डाल, पात-पात, कभी कलैया तो कभी कलाबाज़ी, और कभी तो नाचने लग जाते! मुनिया भी कम निराली नहीं थी। किसी भी इंसान की बोली बोलना उसके बाएँ पंख का खेल था। मुमताज़ हमेशा मुनिया से उसकी नक्ल उतारने को कहती रहती। जब

मुमताज़ काम करती तो लक्का और लोटन दाना चुग कर बादलों में गुम हो जाते लेकिन कुछ ही देर बाद थोड़ा और दाना चुगने लौट आते।

लखनऊ आकर मुमताज़ को एक और दोस्त मिला-पड़ोस के सब्ज़ी वाले का आठ साल का बेटा, मुन्नु! मुन्नु हर रोज़ अपने पिता के साथ सब्ज़ी-भाजी लिए जगह-जगह फेरी लगाता और अपने ख़ास अंदाज़ में गुहार लगाता, “सब्ज़ी ले लो...ओ...ओ।” हाल ही में उसकी दोस्ती मुमताज़ के साथ हुई थी। हर रोज़ मुमताज़ अपना नाश्ता उसके साथ बाँटती और खाते-खाते दोनों बच्चे लक्का और लोटन के खेल देखा करते।

ईद के दिन भी दोनों दोस्त अपने पंछियों की उछल-कूद देख रहे थे। मुन्नु को लगा मुमताज़ आज बहुत उदास है, इतनी उदास कि कहीं वह रो ही न दे। “क्या बात है, आपा, आज इतनी गुमसुम क्यों हो? क्या हरदोई की याद आ रही है? क्या वहाँ तुम्हारे और भी पालतू पंछी हैं?”

“नहीं, नहीं, पंछी तो नहीं लेकिन हाँ मेरी अम्मी और मेरी बहनें, रेहाना और सलमा वहीं रहते हैं,” कह कर मुमताज़ कढ़ाई शुरू करने लगी।

“तुम्हें यह कढ़ाई किसने सिखाई?” मुन्नु ने पूछा।

“चिकनकारी तो हम पिछली तीन पुश्तों से करते आ रहे हैं। मैंने अपनी अम्मी से और अम्मी ने नानी से यह हुनर सीखा,” मुमताज़ बोली, “मेरी नानी लखनऊ के फ़तेहगंज इलाके की थीं। लखनऊ कटाव के काम और चिकनकारी के लिए मशहूर था। वे मुझे नवाबों और बेग़मों के किस्से, बारादरी (बारह दरवाज़ों वाला महल) की कहानियाँ, ग़ज़ल और शायरी की महफ़िलों के बारे में कितनी ही बातें सुनाया करतीं। और नानी के हाथ की बिरयानी, कबाब और सेवैंयाँ इतनी लज़ीज़ होती थीं कि सोचते ही मुँह में पानी आता है! मैंने उन्हें हमेशा चिकन की स़फेद चादर ओढ़े हुए देखा, और जानते हो, वह चादर अब भी मेरे पास है।” नानी के बारे में बात करते-करते मुमताज़ की आँखों में अजीब-सी चमक आ गई, “मैंने अपनी माँ को भी सबुह-शाम कढ़ाई करते ही देखा है, दिन भर सुई-तागे से कपड़ों पर तरह-तरह की कशीदाकारी बनाते।”

“अरे, तो क्या वह कभी भी घर से बाहर नहीं जाती थीं?” मुन्नु हैरान था।

“नहीं, जाती थीं लेकिन कभी-कभी, सब्ज़ी-भाजी लेने या रिश्ते वालों के यहाँ। रेहाना और सलमा भी घर से बहुत कम ही निकलती हैं, और जब जाती हैं तो हमेशा सिर पर ओढ़नी लेकर। मेरी अम्मी बुरका पहनती हैं। मेरी बहनें तो कभी भी पढ़ने नहीं गईं लेकिन मैं आठवीं जमात तक पढ़ी हूँ। उसके बाद फिर मैं भी घर पर रह कर अम्मी और अपनी बहनों से कशीदाकारी सीखती रही हूँ,” मुमताज़ ने अपनी कहानी मुन्नु को सुनाई।

“अरे वाह, तो तुम पाठशाला भी गई हो!” मुन्नु चहका। मुन्नु भी छुटपन से अपने पिता के काम में हाथ बँटाता आया था। इसलिए उसे कभी पाठशाला जाने का मौका नहीं मिला।

“हाँ, हमारी चिकनकारों की बिरादरी में लड़कियाँ पाठशाला कम ही जाती हैं। मेरी

अम्मी को पढ़ना-लिखना नहीं आता। वह तो यह भी नहीं जानती थीं कि व्यापारी को उनके काम का मेहनताना कितना देना चाहिए। पहले तो मैंने उन्हें थोड़ा हिसाब करना, गिनना सिखाया। लेकिन फिर हमें रुपयों की ज़रूरत पड़ने लगी। तब मैंने भी यही काम पकड़ लिया।” मुमताज़ बहुत हौले से, कुछ रुक कर बोली, “कभी-कभी तो अम्मी की इतनी याद आती है कि मैं रात-रात भर रोया करती हूँ।”

“अच्छा आपा, रात में सपने देखती हो?” मुन्नु ने अपने दोस्त को बहलाने के लिए एकदम बात बदली।

“देखती हूँ न! देखती हूँ कि मैं भी लोटन और लक्का की तरह नीले आसमान में उड़ रही हूँ और न जाने कहाँ-कहाँ जाती हूँ सपनों में,” मुमताज़ बोली, “शायद उड़ते-उड़ते किसी रोज़ कहीं नानी से मुलाकात ही हो जाए...।”

“ऐसा है तो जल्दी से जाओ और अपनी नानी की चादर ले आओ, मैं तुम्हें एक खेल दिखाता हूँ,” मुन्नु रुआब से बोला। उसने मुमताज़ को चाँद पाशा के बारे में बताया। चाँद पाशा एक बीमार, बूढ़ा जादूगर था जिससे मुन्नु की मुलाकात अपने पिता के साथ फेरी लगाते हुई थी। उसने मुन्नु को एक बहुत ही मज़ेदार जादू सिखाया था। मुन्नु चाहता था कि मुमताज़ वह जादू देखकर अपना दुःख भूल जाए।

मुमताज़ अंदर से चादर ले आई। यह चादर नानी ने अपने हाथों से काढ़ी थी, उनका अपनी दोहती के लिए आखिरी तोहफा। इतना सुंदर काम था-किनारी की बखिया भी, एक-एक टाँका मोती जैसा पिरोया हुआ।

"अच्छा, अब अपनी आँखें बंद करो और चादर का एक कोना थाम लो। दूसरा कोना मैं पकड़ लेता हूँ। अब एक लंबी साँस लो और खूब अच्छी तरह सोचो कि ऐसी कौन सी चीज़ है जो तुम्हें सबसे ज़्यादा चाहिए," मुन्नु बोला।

मुमताज़ सोचने लगी। सोचने लगी वह बादलों के ऊपर उड़ रही है, नई-नई जगह देख रही है, नए-नए लोगों से मिल रही है। उसे लगा कि बखिया की तरह वह भी दूर भागती जा रही है, तेज़, तेज़...और तेज़। लोटन ने अपनी चोंच में चादर का तीसरा कोना और लक्का ने चौथा कोना पकड़ा और वे सब उड़ने लगे, ज़मीन नीचे छूटती जा रही थी और आसमान नज़दीक आ रहा था।

वे सब किसी दूर, अनजाने शहर में पहुँच गए थे। वहाँ पहाड़ नीले थे, और नीले-नीले आसमान में तरह-तरह के रंगों वाले पंछी उड़ रहे थे। नीचे वादी में फलों से लदे पेड़ और फूलों से महकते बग़ीचे थे। लोटन और लक्का मुमताज़ को लेकर एक फ़िरोज़ी रंग के तालाब के किनारे उतरे।

किनारे पर लंबे-लंबे गर्म फिरन पहने, पीठ झुकाए कुछ आदमी अपने काम में मसरूफ़ थे। वे लोग बहुत ही महीन सुइयों से गर्म दुशालों पर कढ़ाई कर रहे थे-रंगबिरंगे फूल, पत्तियाँ और पंछी...हूबहू वादी के फूलों और पंछियों जैसे।

उनमें सबसे बुज़ुर्ग कशीदाकार, खुरशीद ने मुमताज़ को सलाम कहा और पूछा कि वह कहाँ से आई है। "जी, मैं लखनऊ से हूँ," मुमताज़ ने भी बड़े मियाँ को सलाम किया, "मैं चिकनकार हूँ।"

खुरशीद ने मुमताज़ को वह दुशाला दिखाया जो वे काढ़ रहे थे, “देखो बेटी, मैंने कश्मीर के पंछी और फूल अपने शॉल में उतार लिए हैं। यह है गुलिस्तान, फूलों से भरा बग़ीचा और ये रहीं बुलबुल। यह जो देख रही हो, इसे हम चश्म-ए-बुलबुल कहते हैं यानि बुलबुल की आँख। जिस तरह बुलबुल अपने चारों ओर देख सकती है, वैसे ही यह टाँका हर तरफ़ से एक जैसा दिखाई देता है!” कह कर खुरशीद ने मुमताज़ को वह टाँका काढ़ना सिखाया।

मुमताज़ नया टाँका जल्दी से सीख गई और उसकी उँगलियाँ शॉल पर दौड़ने लगीं।

कुछ देर बाद खुरशीद ने मुमताज़ को कहवा-कश्मीरी चाय और ताज़े सिके गर्मागर्म नान पेश किए। उसने बताया कि कई साल पहले कश्मीर के कशीदाकारों ने लखनऊ के नवाब के यहाँ जाकर वहाँ के चिकनकारों के साथ काम किया था।

कुछ देर बाद लोटन और लक्का ज़मीन पर लौटे। मुमताज़ अपने नए दोस्तों को अलविदा कह कर लखनऊ की तरफ़ उड़ने लगी और चुटकी बजाते ही उसने देखा कि वह आबिदा ख़ाला के घर पर थी। वहाँ मुन्नु वैसे ही बैठा था जहाँ वह उसे छोड़ आई थी। मुमताज़ ने उसे अपनी कश्मीर-यात्रा के बारे में बताना शुरू ही किया था कि मुन्नु अपने पिता की आवाज़ सुनकर घर भागा।

मुमताज़ अपनी कढ़ाई में जुट गई। उसके दिमाग में अपनी यात्रा के दौरान देखे कितने ही नए-नए नमूने घूम रहे थे। कुछ ही दिनों में मुमताज़ ने फूल-पत्तियों-पंछियों से भरा एक बड़ा ही खूबसूरत कुरता तैयार कर लिया। हर नमूने के बीचोंबीच चश्म-ए-बुलबुल कढ़ी थी।

कुरते को देखकर मुहल्ले की सब औरतें दंग रह गईं। कितनी उम्दा कढ़ाई, कितना सजीव चित्रण!

लेकिन मेहरु और कमरु को अपनी बहन का काम देखकर खुशी कम, जलन ज़्यादा हुई।

“आखिर मुमताज़ ने यह सब कहाँ से सीखा? न वह कहीं बाहर आती-जाती है, न कोई नई चीज़ ही देखती है-तो फिर इतने सुंदर रंगों में ऐसी बढ़िया कढ़ाई वह कैसे बना लेती है,” मेहरु तुनक कर बोली।

“हाँ, लेकिन हमें जल्दी ही कुछ करना होगा वरना सब के सब उसी की तारीफ़ के पुल बाँधते नज़र आएँगे,” कमरु ने कहा।
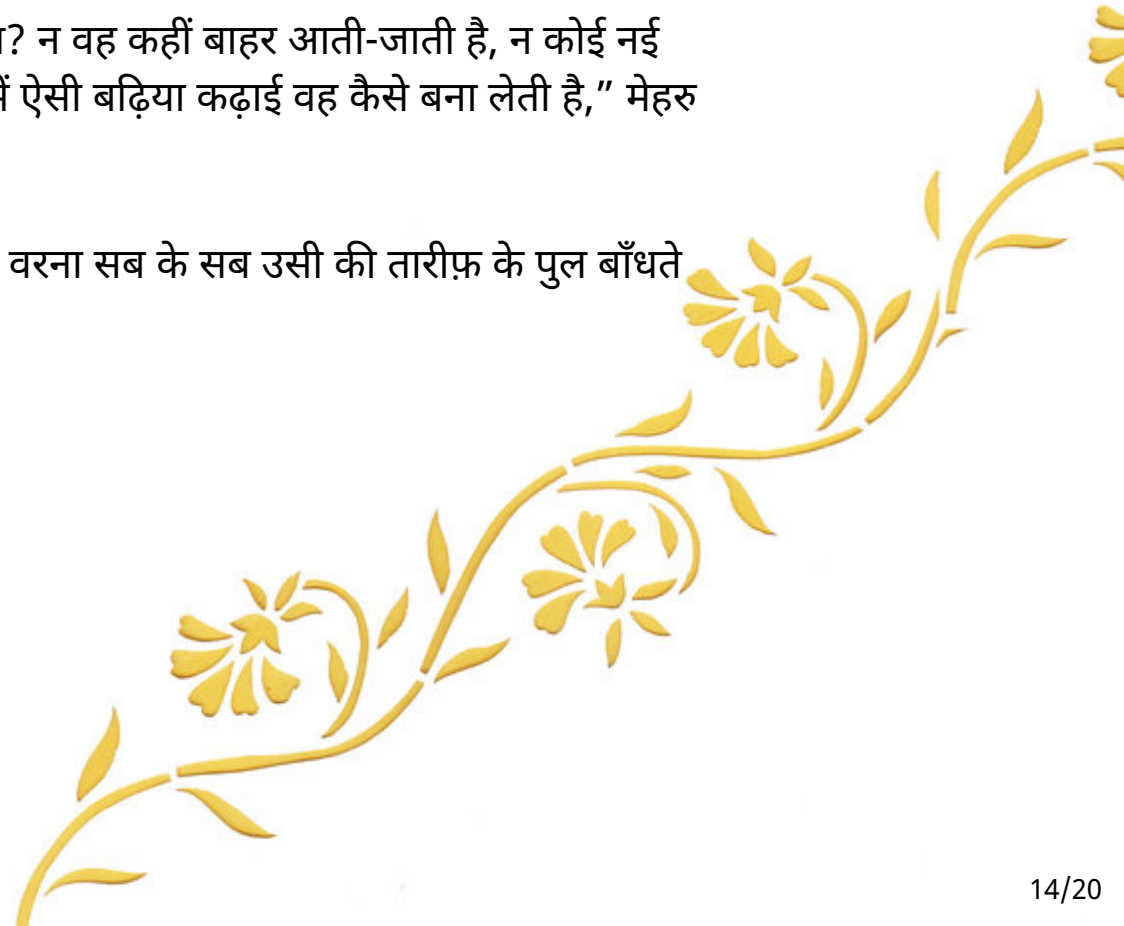
दोनों बहनों ने एक तरकीब सोच ली। एक शाम जब मुमताज़ लक्का-लोटन के लिए दाने का इंतज़ाम करने निकली तो मेहरु ने काम करने के लिए मुमताज़ को दिया गया सारा रंगीन कपड़ा और धागे कहीं छिपा दिए। सिर्फ़ सफ़ेद कपड़ा ही बचा रहा, "तो अब देखते हैं," मेहरु उँगलियाँ नचाती बोली, "हमारी प्यारी बहन की तारीफ़ कौन करता है!"

अगले रोज़ मुन्नु ने देखा कि मुमताज़ अपने कबूतरों के पास उदास बैठी है। पूछने पर वह बोली "सफ़ेद कपड़े पर कढ़ाई करना बहुत मुश्किल होता है क्योंकि वह बहुत जल्दी गंदा हो जाता है। और अपने रंगीन धागों के बिना मैं काढ़ूँगी भी कैसे?" मुमताज़ मायूस थी।

"उदास न हो, आपा," मुन्नु बोला, "नानी की चादर कब काम आएगी! जाओ, उसे ले आओ और खूब ध्यान लगाकर सोचो। कौन जाने आज तुम किस जादुई नगरी में पहुँच जाओ!"

और जानते हो इस बार मुमताज़ उड़ कर कहाँ पहुँची? वह पहुँची एक बहुत ही प्राचीन नगरी में-जहाँ कोई रंग नहीं था! वहाँ उसने कितने ही लोग देखे-कुछ पैदल थे और कुछ बहुत ही बढ़िया, चमकदार गाड़ियों पर सवार थे। लेकिन हैरत की बात यह थी कि सब लोगों ने सफ़ेद कपड़े पहन रखे थे-सुंदर, महीन कढ़ाई वाले चाँदनी से रौशन, चमकते सफ़ेद कपड़े!

और फिर मुमताज़ ने अपनी नानी को देखा! एक चौड़ी सड़क के किनारे नीम के पेड़ तले बैठी थीं! मुमताज़ खुशी के मारे चिल्लाई और "नानी, नानी" करती उनके गले से लग गई।

नानी ने मुमताज़ के माथे को बड़े प्यार से चूमा और बोली, “क्यों मेरी बच्ची, तू इतनी उदास क्यों है? तुझे शायद पता नहीं कि असली चिकनकारी रंगीन कपड़े पर तो होती ही नहीं। उसे तो सदियों से सफ़ेद मलमल पर ही काढ़ते थे क्योंकि यह कुरते आदमी ही पहना करते थे।

फिर जब औरतों ने चिकन के कुरते पहनना शुरु किए तो यह काम रंगीन कपड़े पर भी होने लगा। लेकिन चिकन की बेहतरीन कढ़ाई सफ़ेद मलमल पर सफ़ेद धागे से ही होती है। यही इस काम का सार है, उसकी रूह है...और एक काबिल कशीदाकारिन का सबसे बड़ा इम्तिहान भी।”

जब मुमताज़ इस विस्मय-नगरी से लौटी तो उसने एक बड़ा सफ़ेद कपड़ा लिया और उस पर सफ़ेद धागे से फूल काढ़ने बैठ गई। उसने हरदोई के आमों और कश्मीर के बादाम के जैसे पत्ते काढ़े और फूलों के गुच्छों से लदी झाड़ियों के बीचोंबीच एक बहुत ही खूबसूरत मोर भी! वह किसी जादुई चादर से कम नहीं लगती थी।

मुमताज़ के काम ने तो सभी का मन मोह लिया था। थोक के व्यापारी और चिकनदार-सबकी ज़ुबाँ पर हरदोई से आई एक छोटी-सी चिकनकारिन का ही नाम था! अपनी नुमाइशों में दिखाने के लिए कुछ आला, अमीर औरतें आबिदा खाला से मुमताज़ का काम माँगने आईं।

अब तो कमरु और मेहरु की जलन का ठिकाना ही नहीं रहा। मुमताज़ का कहीं और नाम न हो जाए, इसके लिए उन्होंने एक और योजना बनाई। काढ़ने से पहले कपड़े पर कच्चे रंग से नमूने की छपाई होती थी। कढ़ाई होने के बाद कपड़े को धोया जाता था जिससे वे सब रंग निकल जाते थे।
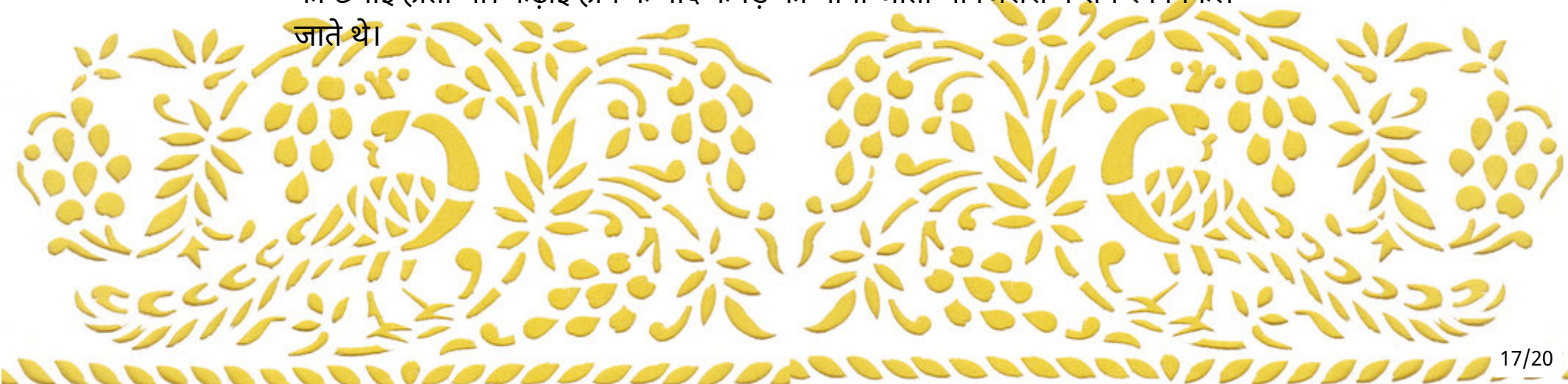
कमरु और मेहरु ने तय किया कि वे मुमताज़ के लिए छपाई भी नहीं कराएँगी। लेकिन मुमताज़ भी अब ऐसी छोटी-मोटी रुकावटों से घबराने वाली कहाँ थी। सपनों ने उसकी कल्पना को पंख दे दिए थे और उसे कढ़ाई के नमूनों की कोई कमी नहीं थी।

फिर एक रोज़ ख़बर आई कि मुमताज़ की कढ़ी हुई उस सफ़ेद चादर को ईनाम मिला है।

शहर से मुमताज़ को न्यौता आया कि वह वहाँ आकर अपना ईनाम ले।

मुमताज़ इतनी खुश थी कि पूछो मत! और वह चाहती थी कि उसकी इस खुशी में उसकी दोनों बहनें भी शरीक हों। उसने कमरु और मेहरु से कहा कि वे भी उसके साथ उस आयोजन में चलें। मुमताज़ की सच्ची खुशी देखकर और अपनी ईर्ष्या सोचकर दोनों को बहुत मलाल हुआ।

ईनाम के जलसे में कमरु और मेहरु ने देखा कि सब मुमताज़ को कितनी इज़्जत दे रहे थे। कुछ-एक ने तो उन्हें भी ऐसी हुनर वाली लड़की की बहनें होने की बधाई दी।

जलसे के बाद जब सब घर लौटे तो कमरु ने मुमताज़ से पूछा, "ऐसे सुंदर, एक से एक बढ़िया नमूने तुम कहाँ से लाईं?"

मुमताज़ कुछ पल तो ख़ामोश रही। फिर उसने अपना जादू अपनी बहनों को बताने का फ़ैसला कर लिया। मुस्करा कर, वह कमरु से बोली, "चलो, तुम भी मेरी नानी की चादर का एक कोना पकड़ो और ख़ूब ध्यान लगा कर सोचो।"

कमरु ने कोना पकड़ तो लिया लेकिन वह कुछ पशोपेश में भी थी। आखिर मुमताज़ कह क्या रही थी! उसे तो वहाँ नाचती मुनिया और गुटरगूँ करते, खेलते हुए लक्का-लोटन के इलावा और कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था।

सांझी

साँझी की प्राचीन कला आज भी भारत के उत्तर प्रदेश में स्थित मथुरा और वृंदावन में प्रचलित है। एक ज़माने में कलाकार पेड़ की पतली छाल का प्रयोग करते थे लेकिन अब तो तरह-तरह के कागज़ भी इस्तेमाल किये जाते हैं। नमूने बहुत विस्तृत होते हैं और अधिकतर धार्मिक दृश्य, फूल-पत्ते, वयन और रेखागणित संरचनाएँ दर्शाते हैं। इस जटिल कला का उपयोग मंदिरों में प्रतिमाएँ सजाने के लिए, कपड़े पर देवी-देवताओं के स्टैंसिल या बच्चों के लिए स्टैंसिल काटने के लिए किया जाता है। तस्वीर में रंग या चमक देने के लिए स्टैंसिल के नीचे रंगीन या धात्विक कागज़ का इस्तेमाल किया जाता है।

दस्तकार हाट समिति भारतीय शिल्पकारों की एक विशाल संस्था है जो कि इस देश की पारंपरिक दस्तकारी से जुड़े लोगों के सामाजिक और आर्थिक उत्थान के लिए कार्यरत है। चार कहानियों की इस शृंखला को चित्रित करने के लिए प्रांतीय कला और शिल्प के नमूनों का इस्तेमाल किया गया है जिससे भारत की भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक संवेदनाओं को साझा किया जा सके। हम युनेस्को, नई दिल्ली, के आभारी हैं जिनके योगदान से यह कार्य पूरा हुआ।

Story Attribution:

This story: मुमताज़ ने काढ़े अपने सपने is translated by Bhavna Pankaj . The © for this translation lies with Pratham Books, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Based on Original story: 'Mumtaz Embroiders Her Dreams', by Jolly Rohatgi . © Dastkari Haat Samiti , 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license.

Other Credits:

'Mumtaz Ne Kadhe Apne Sapne' has been published on StoryWeaver by Pratham Books. The development and production of this book has been supported by Shalini, Narayan and Dilip Bhargava. www.prathambooks.org

Images Attributions:

Cover page: A woman and a child flying away on a magic carpet with a tree in the background by Ram Soni © Ram Soni, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 2: Fragrant sweets in a bowl, by Ram Soni © Ram Soni, 2014. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 3: Three people buying things from a roadside vendor, by Ram Soni © Ram Soni, 2014. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 5: Woman sitting on the floor, embroidering on a cloth, by Ram Soni © Ram Soni, 2014. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 6: One bird flying and another pecking seeds on the ground, by Ram Soni © Ram Soni, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 8: A bird spreading its wings to fly, by Ram Soni © Ram Soni, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 10: A woman and a child flying away on a magic carpet guided by three birds, by Ram Soni © Ram Soni, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 11: Three artisans sitting on the ground embroidering a shawl, by Ram Soni © Ram Soni, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 12: Tea set in the corner with birds flying above, by Ram Soni © Ram Soni, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license. Page 13: An embroidered kurta with leaves around it, by Ram Soni © Ram Soni, 2010. Some rights reserved. Released under CC BY 4.0 license.

मुमताज़ ने काढ़े अपने सपने

(Hindi)

अपने गाँव से चिकनकारी के कुछ नए टाँके सीखने, मुमताज़ लखनऊ आती है- वहाँ की मशहूर कढ़ाई के अलावा, वह और कितना कुछ सीख जाती है। सब अपने दोस्त मुन्नु की बदौलत! जौली रोहतगी की इस मर्मस्पर्शी कहानी को राम सोनी ने साँझी शैली में बनाए चित्रों से सजाया है।

This is a Level 4 book for children who can read fluently and with confidence.